माननीय अशोक भान जे. के समक्ष

न्यायालय अपनी गति पर

बनाम

रूरल कॉलेज ऑफ एजुकेशन, कैथल - प्रतिवादी।

सी.ओ. सी.पी. 1991 का 746.

9 जुलाई 1994.

न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971, धारा 20-सीमा-धारा 20 उस तारीख से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद अवमानना की कार्यवाही शुरू करने की अदालतों की शक्ति पर पूर्ण रोक लगाती है, जिस दिन अवमानना का कार्य करने का आरोप लगाया गया है-संहिता पूर्ण है अधिनियमन-अदालतों के साथ कोई विवेकाधिकार नहीं।

माना गया कि अधिनियम की धारा 20 अदालत द्वारा अवमानना की किसी भी कार्यवाही को या तो अपनी इच्छा से या अन्यथा उस तारीख से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद शुरू करने पर रोक लगाती है जिस दिन अवमानना का आरोप लगाया गया है। सीमा की गणना आवेदन प्रस्तुत करने की तारीख से नहीं की जाएगी। अदालत को उस तारीख से एक वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद कार्यवाही शुरू करने से रोक दिया गया है जिस दिन अवमानना का आरोप लगाया गया है।

(पैरा 91

याचिकाकर्ता के वकील जे.एस. खेहर।

प्रतिवादी मोहिंदर सिंह ढुल और वीरमती के वकील चंद्र सिंह।

आर.के. मलिक, प्रतिवादी जय पाल और देव करण पुनिया के वकील।

निर्णय

अशोक भान, **जे.**

(1) रूरल कॉलेज ऑफ एजुकेशन, रूरल कॉलेज सोसाइटी, कैथल द्वारा स्थापित और संचालित किया गया था, जो भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1960 के तहत पंजीकृत था। यह संस्था कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय से संबद्ध है। कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय ने निर्देश जारी किए कि बीएड पाठ्यक्रम में प्रवेश उन व्यक्तियों को दिया जाए जो हरियाणा के निवासी हैं। कॉलेज अधिकारियों ने कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा जारी निर्देशों का उल्लंघन करते हुए प्रवेश दिया। चूँकि कॉलेज द्वारा प्रवेश कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा जारी निर्देशों का उल्लंघन करके दिए गए थे, इसलिए इसने कॉलेज द्वारा दिए गए प्रवेशों को मान्यता देने से इनकार कर दिया। कॉलेज के प्रबंधन ने इस न्यायालय में 1978 का सी.डब्ल्यू.पी नंबर 1857 दायर किया। एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने 9 अक्टूबर, 1978 को रिट याचिका की अनुमति दी, जिसके खिलाफ 1978 का एल.पी.ए. नंबर 630 दायर किया गया था, जिसे अंततः अंतिम निर्णय के लिए पूर्ण पीठ के समक्ष रखने का आदेश दिया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को रद्द कर दिया गया और रिट याचिका को खारिज करने का आदेश दिया गया। यह निर्णय कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय एवं अन्य बनाम रूरल कॉलेज ऑफ एजुकेशन कैथल (1) के रूप में बताया गया है। दयालु रुख अपनाते हुए, पूर्ण पीठ ने आदेश दिया कि पहले से ही बी.एड पाठ्यक्रम में दाखिला लेने वाले छात्रों को रिट याचिका खारिज होने के कारण नुकसान उठाना पड़ा है और निर्देश दिया कि उन्हें विश्वविद्यालय द्वारा विधिवत पंजीकृत किया जाएगा और उन्हें विश्वविद्यालय के छात्रों के रूप में माना जाएगा। पूर्ण पीठ ने आगे निर्देश दिया कि कॉलेज के प्रबंधन को यह वचन देने पर कि भविष्य में वे विश्वविद्यालय द्वारा जारी निर्देशों का उल्लंघन करके किसी भी छात्र को बी.एड कक्षा में प्रवेश नहीं देंगे, कॉलेज की असंबद्धता को विश्वविद्यालय द्वारा वापस ले लिया जाएगा। वर्ष 1970 में कॉलेज के शासी निकाय ने एक प्रस्ताव पारित किया और इसके अध्यक्ष श्री मोहिंदर सिंह ढुल को पूर्ण पीठ द्वारा पारित आदेशों के संदर्भ में एक उपक्रम दाखिल करने के लिए अधिकृत किया। श्री मोहिंदर सिंह ढुल ने इस न्यायालय में एक उपक्रम दायर किया और विश्वविद्यालय ने इस न्यायालय के निर्देशानुसार असंबद्धता आदेश को रद्द कर दिया।पूर्ण पीठ के फैसले और आदेश के खिलाफ, कॉलेज के प्रबंधन ने भारत के सर्वोच्च न्यायालय में विशेष अनुमति याचिका दायर की।

(2) इस बीच, वर्ष 1980-81 में कॉलेज द्वारा जारी निर्देशों का उल्लंघन करते हुए फिर से प्रवेश दिए गए और इस न्यायालय में सी.डब्ल्यू.पी. संख्या 2090/1980 और कुछ अन्य रिट याचिकाएं सीधे इन प्रवेशों के संबंध में भारत के सर्वोच्च न्यायालय में दायर की गईं। इन रिट याचिकाओं में, एक अंतरिम उपाय के रूप में, सुप्रीम कोर्ट द्वारा यह आदेश दिया गया था कि कोई रोक नहीं होगी, लेकिन इस

(1) ए.आई.आर. 1980 पंजाब और हरियाणा 103|

बीच की गई स्वीकारोक्ति रिट याचिका के परिणाम के अधीन होगी। दायर की गई रिट याचिकाओं को सुप्रीम कोर्ट ने सुनवाई के लिए लिया और 26 अप्रैल, 1991 को फैसला सुनाया गया। रिट याचिकाएं खारिज कर दी गईं और यह माना गया कि "चूंकि कॉलेज अधिकारियों ने उच्च न्यायालय को दिए गए स्पष्ट वचन का उल्लंघन करते हुए काम किया है, इसलिए प्रथम दृष्टया वे अवमानना के दोषी हैं। इसलिए, हम उच्च न्यायालय को कॉलेज और उसके शासी निकाय के खिलाफ उचित कार्रवाई करने का निर्देश देते हैं।

(3) मामला 29 अगस्त, 1991 को इस न्यायालय की एकल पीठ के समक्ष रखा गया था। इस न्यायालय ने प्रबंध समिति के अध्यक्ष श्री मोहिंदर सिंह ढुल को अवमानना का नोटिस जारी करने का आदेश दिया, ताकि यह बताया जा सके कि उनके खिलाफ अदालत की अवमानना अधिनियम के तहत कार्यवाही क्यों न शुरू की जाए। बाद में गवर्निंग बॉडी के अन्य सदस्यों, शिक्षण स्टाफ के कुछ सदस्यों और अन्य कर्मचारियों को भी अदालत की अवमानना के नोटिस जारी किए गए। लिखित बयान के अवलोकन से, यह पता नहीं लगाया जा सकता है कि

प्रासंगिक वर्ष 1980-81 के लिए शासी निकाय के सदस्य कौन थे जब इस न्यायालय में दिए गए वचन के उल्लंघन में प्रवेश दिए गए थे। रजिस्ट्रार कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय ने शासी निकाय के सदस्यों का विवरण देने के लिए उन्हें जारी किए गए नोटिस के अनुसरण में अपना हलफनामा दायर किया। उनके हलफनामे के पैराग्राफ 5 और 6 नीचे पुन: प्रस्तुत किए गए हैं: -

“5. विश्वविद्यालय की फ़ाइल में 18 जनवरी, 1979 का एक पत्र है, जो सोसायटी (हरियाणा रूरल एजुकेशन सोसायटी (पंजीकृत)) की कार्यकारी समिति द्वारा पारित संकल्प संख्या 4, दिनांक 9 जनवरी, 1979 की एक प्रति है। उपर्युक्त संकल्प के अनुसार, समिति के सदस्यों का नाम, पता, पदनाम और कार्यकाल निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया जाता है -

सीरीयल नम्बर	नाम	पता	पदनाम	अवधि
1.	श्री. एम. एस. ढुल, वी. एवं पी.ओ.पाई	(कैथल)	प्रमुख सलाहकार	1970-80 ई.
2.	श्री. राम सरन, वी. एवं पी. 0. पेगां	(जींद)	प्रबंधक	1976-80 ई.
3.	श्री. शंकर लाई, वी. एवं पी.ओ. पाई	(कैथल)	सदस्य सचिव	1979-83 ई.
4.	श्री. धरम सिंह, वी. एवं पी. 0. प	(कैथल)	सदस्य	1978-79ई.
5.	श्री. गुरपाल सिंह, वी. एवं पी.ओ. राजौंद	(जींद)	सदस्य	1978-79 ई.
6.	श्री. धूप सिंह, वी. एवं पी. 0. माजरा	(जींद)	सदस्य	1978-79 ई.
7.	श्री. कुलदीप सिंह, वी. एवं पी. 0. कंड्रोली	(कुरुक्षेत्र)	सदस्य	1979
8.	सुश्री वीरमती, वी. एवं पी. 0. पाई	(कैथल)	सदस्य	1979
9.	मिस निर्मलला, वी.एण्ड पी. 0. कंड्रोली	(कुरुक्षेत्र)	सदस्य	1979

“6. श्री एम.एस. ढुल ने ग्रामीण कॉलेज शिक्षा के शासी निकाय के अध्यक्ष के रूप में 13 दिसंबर, 1979 और 1 जनवरी, 1980 को विश्वविद्यालय के नियमों और विनियमों का पालन करने का वचन दिया।इसलिए, वर्ष 1979-80 में विद्यमान शासी निकाय इस प्रतिबद्धता के लिए जिम्मेदार है। इस वर्ष के दौरान शासी निकाय के निम्नलिखित सदस्य थे, जैसा कि विवरणिका के शीर्षक कवर के पीछे की ओर बताया गया है।

शासी निकाय के सदस्य

1. श्री एम.एस.ढुल, अध्यक्ष

2. श्री शंकर लाई, सचिव

3. रिक्त, प्रबंधक

4. श्री राम शरण ,सदस्य

5. श्री धर्म सिंह, सदस्य

6. श्री धूप सिंह, सदस्य

7. श्री डी.के. पुनिया, सदस्य (पदेन)

8. टी श्री आर.बी. जॉली ,सदस्य (प्रतिनिधि)

9. श्री जय पाल, सदस्य (प्रतिनिधि)।

(4) इस शपथ पत्र को पढ़ने पर, यह स्पष्ट है कि सर्वश्री एम.एस. ढुल, राम सरन और शंकर लाई के अलावा, कोई अन्य व्यक्ति वर्ष 1980-81 में शासी निकाय का सदस्य नहीं था और इसलिए इस न्यायालय की अवमानना के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है।

(5) श्री एम.एस. ढुल ने अपना हलफनामा दायर किया है जिसमें उन्होंने कहा है कि उनके खिलाफ शुरू की गई अवमानना कार्यवाही सीमित है क्योंकि कथित अवमानना के लिए 11 साल से अधिक समय बीत चुका है और सुप्रीम कोर्ट ने 1980 के सी.डब्ल्यू.पी.एन. 2090 में ने छात्रों को अपने जोखिम और जिम्मेदारी पर प्रवेश लेने के लिए अधिकृत किया था। अन्य अवमाननाकर्ताओं के लिखित बयान भी इसी तर्ज पर हैं, सिवाय इसके कि उन्होंने आगे दलील दी है कि वे न्यायालय की अवमानना के लिए जिम्मेदार नहीं थे क्योंकि वे कॉलेज के प्रबंधन से जुड़े नहीं थे।योग्यता के आधार पर, इसमें कोई संदेह नहीं है कि तीन व्यक्ति जो शासी निकाय से जुड़े थे यानी एम.एस. ढुल, राम सरन और शंकर लाई, इस न्यायालय को दिए गए वचन का उल्लंघन करते हुए प्रवेश देने के दोषी हैं और इसलिए, इस न्यायालय की अवमानना के कृत्य के दोषी हैं। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने 1980 के सीडब्ल्यूपी नंबर 2090 में अपने अंतरिम आदेश में इस न्यायालय में दिए गए वचन के उल्लंघन में प्रवेश देने के लिए शासी निकाय को अधिकृत नहीं किया था और इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश के संचालन पर सुप्रीमकोर्टऑफइंडिया द्वारा रोक नहीं लगाई गई थी। रिट याचिका का निपटारा करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने यह भी माना कि इस न्यायालय को दिए गए वचन का उल्लंघन करते हुए शासी निकाय द्वारा प्रवेश दिए गए थे। इस प्रकार अवमानना आयोग का कार्य रिकॉर्ड पर स्थापित हो गया है।

(6) विचार करने योग्य अगला बिंदु यह है: क्या न्यायालय अवमानना अधिनियम के तहत कार्यवाही न्यायालय अवमानना अधिनियम (इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 20 के मद्देनजर शुरू की जा सकती है जो इस प्रकार है: -

“20. अवमानना के लिए कार्रवाइयों की सीमा:-कोई भी न्यायालय, अवमानना के आरोप की तारीख से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद, अपनी स्वयं की प्रेरणा से या अन्यथा, अवमानना के लिए कोई कार्यवाही शुरू नहीं करेगा।

(7) श्री जे.एस. खेहर, अधिवक्ता से इस न्यायालय द्वारा इस न्यायालय की ओर से उपस्थित होने का अनुरोध किया गया था जिसे उन्होंने तुरंत स्वीकार कर लिया और इस न्यायालय को बहुमूल्य सहायता दी। सुदेश कुमार बनाम जय नारुइन और अन्य (2) पर भरोसा करते हुए उन्होंने तर्क दिया कि अवमानना का आरोप उस समय से अधिनियम की धारा 20 के चिंतन के तहत किया गया होगा।जब न्यायालय को अपनी अवमानना के बारे में पता चला, न कि उस तिथि से जब अवमाननाकर्ता द्वारा किया गया कार्य अवमाननापूर्ण माना गया। उन्होंने बरदाकांता

मिश्म बनाम मिश्रा सी.जे. उड़ीसा, एच.सी. (3) में सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर भी भरोसा किया। जहां उनके आधिपत्य ने कुछ अलग संदर्भ में कहा, 'यही कारण है कि धारा 20 में प्रदान की गई सीमा की अवधि के लिए

(2) 1974 पी.एल.आर. 23|

(3) ए.आई.आर. 1974 एस.सी. 2255।

यथास्थिति वह तारीख है जब न्यायालय द्वारा अवमानना के लिए कार्यवाही शुरू की जाती है।' सुप्रीम कोर्ट की इन टिप्पणियों पर भरोसा करते हुए, उनके द्वारा यह तर्क दिया गया कि अधिनियम की धारा 20 के तहत परिसीमा उस दिन से लागू होगी जब न्यायालय अधिनियम के तहत कार्यवाही शुरू करेगा।

(8) इसके विपरीत, प्रतिवादियों की ओर से पेश वकील ने रोमेश कुमार बनाम भगवान दोसाकुजा (4), गुलाब सिंह और एक अन्य बनाम प्रिंसिपल, श्री रामजी दास (एसआई), एन. वेंकटरमणप्पा बनाम डी के नायकर (6), और वीना सिक्का बनाम श्रीमती शकुंतला जाखू (7), इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया। यह तर्क देने के लिए कि क़ानून न्यायालय को अधिनियम की धारा 20 में उल्लिखित अवधि से परे कार्यवाही करने का कोई विवेक नहीं देता है।

(9) अधिनियम की धारा 20 उस तारीख से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद या तो अपनी स्वयं की प्रेरणा से या अन्यथा अवमानना की किसी भी कार्यवाही को शुरू करने पर रोक लगाती है, जिस दिन अवमानना का आरोप लगाया गया है। सीमा की गणना आवेदन प्रस्तुत करने की तारीख से नहीं की जानी चाहिए। अदालत को उस तारीख से एक वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद कार्यवाही शुरू करने से रोक दिया गया है जिस दिन अवमानना की गई थी। तो, देखने वाली असली बात यह है कि अवमानना का कृत्य कब किया गया। इस विशेष मामले में, यह देखा जाएगा कि अवमानना का कार्य पहली बार वर्ष 1980 में किया गया था, जबकि इस न्यायालय द्वारा 11 वर्षों के अंतराल के बाद वर्ष 1991 में स्वप्रेरणा से कार्यवाही शुरू की गई थी। स्पष्ट शब्दों में धारा 20 अवमानना की कथित तिथि से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद अवमानना के लिए कार्यवाही शुरू करने की अदालत की शक्ति पर पूर्ण प्रतिबंध लगाती है। एक बार जब यह स्थापित हो जाता है कि जिस अधिनियम को शुरू करने की मांग की गई है वह न्यायालय की अवमानना के कमीशन के एक वर्ष से अधिक का है तो अधिनियम की धारा 20 के कारण न तो न्यायालय को अपनी स्वयं की गति से और न ही पीड़ित व्यक्ति द्वारा किए गए आवेदन पर अधिनियम के तहत कार्यवाही शुरू करने की शक्ति है।

(4) 1986 (2) एल.एल.आर. 432|

(5) ए.आई.आर. 1975 इलाहाबाद 366|

(6) 1978 सीआरएल.एल.जे. 726|

(7) आई.एल.आर. 1991 (2) पी.बी. एवं हाई. 238|

(10) मैंने बहस के दौरान उद्धृत मामलों की सावधानीपूर्वक जांच की है। बरदाकांत मिश्रा के मामले (सुप्रा) में उनके आधिपत्य की टिप्पणियाँ पूरी तरह से अलग संदर्भ में हैं और वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होती हैं। रोमेश कुमार के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा बाद के फैसले में सुदेश कुमार के मामले (सुप्रा) पर विचार किया गया और समझाया गया और यह माना गया कि सुदेश कुमार का मामला (सुप्रा) स्पष्ट रूप से अलग

था। मैं रोमेश कुमार के मामले (सुप्रा) के बाद के मामले में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों से पूरी तरह सहमत हूं। रोमेश कुमार के मामले (सुप्रा) में, यह माना गया कि कार्यवाही शुरू करने की सीमा अवमानना के कार्य से एक वर्ष है और ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो एक वर्ष की सीमा के समय को चलने से रोकता हो। इसी तरह का दृष्टिकोण इस न्यायालय ने वीना सिक्का के मामले (सुप्रा) में लिया था। कर्नाटक और इलाहाबाद उच्च न्यायालयों ने भी यही विचार रखा है। बरदाकांत मिश्रा के मामले (सुप्रा) में शीर्ष न्यायालय द्वारा दिए गए फैसले पर इस न्यायालय और इलाहाबाद और कर्नाटक उच्च न्यायालयों द्वारा भी विचार किया गया था और यह माना गया था कि यह लागू नहीं था और की गई टिप्पणियां एक अलग संदर्भ में दी गई हैं।

(11) मेरे विचार में, अधिनियम की धारा 20 में उल्लिखित अवधि से परे कार्यवाही शुरू करने का न्यायालय के पास कोई विवेकाधिकार नहीं है। अधिनियम की धारा 20 स्पष्ट रूप से अदालत की अवमानना की तारीख से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद अदालत की अवमानना अधिनियम के तहत कार्यवाही शुरू करने के लिए किए गए आवेदन पर या किसी आवेदन पर कार्यवाही शुरू करने की अदालत की शक्ति को सीमित करती है। करने का आरोप है। यह एक पूर्ण अधिनियम है जिसका पूर्णतः पालन किया जाना चाहिए। इसलिए, उत्तरदाताओं के खिलाफ शुरू की गई कार्रवाई को सीमा से परे माना जाता है क्योंकि अवमानना का कथित कार्य वर्ष 1980 में किया गया था जबकि कार्यवाही वर्ष 1991 में शुरू की गई थी। मैं यहां यह कहना जल्दबाजी कर सकता हूं कि यह नियम वहां लागू नहीं होगा जहां अवमानना निरंतर प्रकृति की हो। फर्म गणपत राम राज कुमार बनाम कल्व राम (8) में, यह माना गया कि मकान मालिक और किरायेदार के मामले में जहां किरायेदार को एक विशेष अवधि की समाप्ति पर परिसर खाली करने की आवश्यकता होती है और वह परिसर खाली नहीं करता है और कब्जा नहीं देता है तो कब्जा न देने पर न्यायालय की अवमानना होगी, जो जारी थी और कब्जा देने तक उसके खिलाफ कार्यवाही शुरू की जा सकती है। यह माना गया कि चूंकि यह लगातार गलत था इसलिए अधिनियम की धारा 20 का कोई अनुप्रयोग नहीं था। प्रतिवादियों के वकील द्वारा यह कहा गया कि संस्थान (कॉलेज) पहले ही बंद हो चुका है और अवमानना निरंतर प्रकृति की नहीं है।

(12) ऊपर बताए गए कारणों से, हालांकि मुझे लगता है कि सर्वश्री एम.एस. ढुल, राम सरन और शंकर लाई न्यायालय की अवमानना के कृत्य के दोषी हैं। लेकिन न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 20 में प्रदान की गई सीमा के मद्देनजर, उनके खिलाफ कानूनी तौर पर कोई कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती। नियम हटा दिया गया. कोई लागत नहीं.

(8) ए.आई.आर. 1989 एस.सी. 2285।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है।

सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अँग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

Checked By:
Prerna Arya
Trainee Judicial Officer
Chandigarh Judicial Academy,
Chandigarh